अंतर्मन की कविताएँ

आलोक सेठी

आलोक-एक में अनेक

कविता यूँ कुछ अक्षरों और शब्दों से गूँथी हुई अभिव्यक्ति है। इस बात से कोई असहमत नहीं हो सकता कि कविता एक करिश्मा भी है। वैसे तो कवि हम जैसा ही होता है लेकिन उसकी नज़र और उसका व्यक्तित्व किसी अलग मिट्टी का बना होता है। जीवन और परिवेश से वह कुछ ऐसे बिंब चुनता है जो हमारी आँखों के सामने होते हैं लेकिन उन्हें हम वैसे ज़ाहिर नहीं कर पाते जैसे एक कवि कर देता है। इसीलिए कहा गया है कवि होना बड़ी बात है। उसके मुँह से उसके क़लम से भी बड़ी बात ही नहीं निकलती है। अगर नहीं निकलती तो वह कविता नहीं होती।

आलोक सेठी का कारोबारी होना कविता के लिए किसी तरह का अवरोध नहीं है। वे विदेश यात्रा करते हुए या किसी बिज़नेस मीट को संबोधित करते हुए या परिवार की लाड़ली को विदा करते हुए या मित्रों के बीच ठहाका लगाते हुए कविता को क़लमबद्ध कर देते हैं। यह भी कह सकते हैं कि कविता उन तक चलकर आती है। उसके रूपाकार, उसके संदर्भ, उसके प्रतीक, उसके रूपक और उसकी उपमाएँ आलोक के हृदय में धधकती रहती हैं। जब भी लिखने का सिलसिला बनता है तो काग़ज़ से झरे हुए शब्द यक़-ब-यक़ कविता या नज़्म का जिस्म धारण कर लेते हैं।

आलोक सेठी इन्सानी तक़ाज़ों को निभाने और ज़िंदगी को भरपूर जीने का दूसरा नाम है। वे संस्मरणों, कविताओं, यात्राओं, मैनेजमेंट के सूत्रों को लगातार किताब की शक्ल देते आ रहे हैं। वैसे देखा जाए तो यह सारे काम घाटे के सौदे हैं लेकिन जब किसी के हृदय में कवि अपना डेरा जमा लेता है तो बात नफ़े-नुकसान से कुछ आगे चली जाती है। आलोक सेठी ने रिश्तों को निभाते हुए और अच्छी बातों को किताब का आकार देते हुए जो दाद और दुआएँ बटोरी हैं वह उनकी ज़िंदगी की बहुत बड़ी कमाई है। इस कमाई की बरकत घटने का नाम नहीं लेती। आलोक सेठी ने लोगों के लाड़ का लाभांश कमाया है। आपके हाथ में आलोक की जो नई किताब है उसमें ज़िंदगी की सचाईयों की जज़्बाती दास्तान है। मुझे यक़ीन है कि जब यह कविताएँ आपकी नज़रों के सामने से गुज़रेंगी तो आपको लगेगा कि यह आपके मन की बात है। यह भावना किसी कवि के लिए बहुत अनमोल होती है कि उसका लिखा पढ़ने वाले का अपना बन जाए।

आधी दुनिया घूम चुके आलोक भाई का दिल आज भी खण्डवा की गलियों और ओटलों पर रमता है। दोस्त- अहबाब का साथ आज भी उसे सुहाता है। बुज़ुर्गों, हमउम्रों और नई पीढ़ी के नुमाइंदों से बतियाता है। आलोक सेठी शिखर की परवाह नहीं करता उसे हरदम सफ़र सुख देता है। उसे मंज़िल की तलाश नहीं वह रास्तों का शैदाई है। आलोक सेठी जैसे भी हैं; अनूठे हैं और आलोक जैसे ही हैं। उनके लिए कोई एक शब्द या उपमा देना जोखिम भरा काम है। वे निदा फ़ाज़ली की बात साबित करते हैं; एक आदमी में होते हैं दस-बीस आदमी/जिसको भी देखना, कई बार देखना। आलोक सेठी एक कामयाब बिज़नेस मेन, एक सुकवि, एक सफल लेखक, एक अच्छा प्रस्तोता और एक लाजवाब इन्सान। हर रंग में ढल जाने वाला एक ऐसा बाशिंदा जो एक भरे-पूरे मजमे में अपनी ख़ुशबू महसूस करवा ही देता है।

2015 का साल आलोक की ज़िंदगी के 50वीं पायदान पर आ जाने का साल है। पचास यानी पका हुआ। परिपक्व; लेकिन ऐसा तो आलोक ठेठ से ही है। तो फिर अब पचास के बाद क्या? जनाब आलोक सेठी अब कुछ और तरोताज़ा होकर आपके लिए कुछ नए करिश्मे और कारनामे करने के लिए तैयार होंगे। इसके लिए मैं किसी से भी शर्त लगा सकता हूँ।

संजय पटेल
समीक्षक एवं संस्कृतिकर्मी

sanjaypatel1961@gmail.com +91 97525 26881

अंतर्मन की कविताएँ

Aantarman Ki Kavitayen
by Alok Sethi

प्रथम संस्करण : सितम्बर 2015

क़ीमत : ₹ 200/-

लेखक : **आलोक सेठी**
हिन्दुस्तान अभिकरण, पंधाना रोड, खण्डवा (म.प्र.)
tel : 0733-2223003, 2223004
cell : 094248-50000
mail : hindustanabhikaran@yahoo.co.in
web : www.aloksethi.com

प्रकाशक एवं वितरक : **रंग प्रकाशन**
33, बक्षी गली, राजबाड़ा, इन्दौर 452 004 (म.प्र.)
tel : 0731-2538787, 4068787
visit our online book shop
www.jainsonbookworld.com

ISBN No. : 978-81-88423-62-0

रूपांकन : sanjay patel productions
0 9 7 5 2 5 2 6 8 8 1

© इस पुस्तक के किसी भी अंश को बिना लेखक की अनुमति के उपयोग में लिया जा सकता है। स्रोत का उल्लेख करेंगे तो अच्छा लगेगा।

समर्पित

बड़े भैया श्री अरुण सेठी को...

जिन्होंने सदैव
मेरे क़दमों को राह
नज़रों को मंज़िल
और मन को हौसला दिया।
होठों को हँसी
मुट्ठी में आसमान
और सपनों को इंद्रधनुष दिया।

मुनव्वर राना

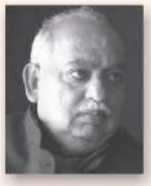

आलोक की कविताएँ वक़्त की अमानत हैं

हक़ीक़त ये है कि हम उनके फ़ैन हैं।

आलोक कहते हैं कि वो मेरे फ़ैन हैं लेकिन हक़ीक़त ये है कि हम उनके फ़ैन हैं। जितनी मुश्किलों और ज़िम्मेदारियों के बीच वो साहित्य को ओढ़ते-बिछाते हैं। साहित्य से मुहब्बत करते हैं, साहित्यकारों की ख़िदमत करते हैं; ये बहुत बड़ा काम है। वे जितना काम करते हैं उनके लिए हमारी हिन्दी-उर्दू अकादमी को उन्हें लाइफ़ टाइम अचीवमेंट पुरस्कार देना चाहिए। वो व्यक्ति नहीं; व्यक्तित्व हैं। उनके संस्कारों में बड़ों से प्रेम और छोटों का ख़्याल बहुत बड़ी बात है। जब हम कभी उस रास्ते से गुज़रते हैं तो खण्डवा स्टेशन का इंतज़ार नहीं करते, बल्कि आलोक सेठी का इंतज़ार करते हैं। हमारा बस चले तो उस स्टेशन का नाम ही आलोक सेठी स्टेशन रख दें। सच तो यह है कि जब हम सफ़र में होते हैं तो कोई भी स्टेशन आए लगता है खण्डवा ही आ जाना चाहिए। दिन हो, रात को, दोपहर हो, सर्दी हो या गर्मी; वे जिस अपनानियत से स्टेशन पर मिलते हैं कि मालूम होता है कि सफ़र में हमारे साथ कोई अपना है। सफ़र में आदमी ख़ुद को अकेला समझता है लेकिन सफ़र में यह अहसास रहना कि अभी आलोक सेठी मिल जाएँगे... सौ-पचास किलोमीटर के आसपास में कहीं पर भी हों, उनको फ़ोन करेंगे वो दवा से लेकर खाना और डॉक्टर से लेकर किताबें तक लेकर हाज़िर हो जाएँगे यह बहुत बड़ी बात है। साहित्यकार को सम्मान देना ख़ुद बहुत बड़ा सम्मान है। उनको अगर अकादमियाँ सम्मान देती हैं तो वे अपने आपको सम्मानित करेंगी; आलोक सेठी को नहीं।

अच्छा तो कोई भी लिख लेता है लेकिन वो लिखने के साथ ही लिखने वालों से मुहब्बत करते हैं ये नज़रिया बहुत कम लोगों को हासिल होता है। वो जब लिखने वालों से मुहब्बत करते हैं तो ख़ुद से मुहब्बत करते हैं। आज किसी को फ़ुर्सत नहीं मिलती कि अपना काम छोड़कर साहित्यकारों के लिए वक़्त निकालें, अदब के लिए वक़्त निकालें। हो सकता है कि हम न रहें लेकिन हम चाहते हैं कि वो सिर्फ़ पचास नहीं सौ साल जिएँ। अपनी हेल्थ और वैल्थ के साथ। ज़ाहिर सी बात है कि वो हम लोगों की अपने से बड़ों की जिस तरह से इज़्ज़त करते हैं उनकी अगली नस्लें भी आलोक की बहुत ख़िदमत करेंगी-मुहब्बत करेंगी।

आलोक सेठी की नज़्मों का ये नया मजमुआ ज़िंदगी के आसपास मौजूद बहुत सारे मंज़रों का ख़ूबसूरत भरा दस्तावेज़ है। वे जुदा-जुदा मसलों पर लिखते आए हैं। उन्हें पढ़ना हमेशा सुकून देता है। मुझे इस बात की ज़्यादा ख़ुशी है कि वे अपने लिखे को समाज को सौंप देते हैं और उसके मूल्यांकन की परवाह नहीं पालते। मूल्यांकन तो कबीर का भी तब नहीं हुआ जब होना था। इसका मतलब ये नहीं कि हम आलोक को कबीर कह रहे हैं। कहने का मतलब यही कि आलोक का लिखा आज नहीं तो कल ज़रूर सराहा जाएगा। उन्होंने अपने लिखे को वक़्त के हवाले कर दिया है और हमें वक़्त के निज़ाम पर पूरा यक़ीन है। आलोक सेठी के लिखे में रिश्ते, हवा, अल्फ़ाज़ और पूरा माहौल बोलता हुआ सुनाई देता है। हम दुआ करते हैं कि इनकी नई किताब और कविताएँ अवाम की अमानत बने।

हम आलोक से बहुत मुहब्बत करते हैं। ऐसे लोगों की समाज और साहित्य को सख़्त ज़रूरत होती है। आलोक देश, कविता और हिन्दी का सम्मान हैं। कविता ज़िंदा है तो शब्द, देश, परिवेश और इन्सान ज़िंदा रहता है। मैं आलोक सेठी के लिए एक शे'र नज़्र करता हूँ...

मैं सारी रोशनाई दोस्ती के नाम करता हूँ
एक यही काम आता है, यही एक काम करता हूँ

आलोक सेठी

अंतर्मन की सेल्फ़ी है

आँसू मन का स्नान हैं। आँसू आँखों को तो साफ़ करते ही हैं, मन की पीड़ा को भी सफ़ा कर देते हैं। आज जीवन में जो सूखापन है उसका कारण यह भी है कि अब हमारी आँखों में आँसू नहीं रहे। गरज़ यह कि हम धीरे-धीरे जज़्बातों से दूरी बनाते जा रहे हैं। भूले से भी अगर पलकें नम होने लगे तो हम आँखों को तुरंत पोंछ लेते हैं कि कोई देख न ले। हमें आँसुओं को छुपाने का शऊर आ गया है क्योंकि हम तर्क के मरुस्थल हो गए हैं। भावनाओं का गला घोंटते हुए हमने अपने आपको कारोबारी बना लिया है। हम धीरे-धीरे अकेले होते जा रहे हैं क्योंकि हमने आसपास के लोगों पर भरोसा करना छोड़ दिया है। ख़ुद को एक नीरव एकांत में बंद कर लिया है। हम ज़िंदगी का सारा सुख अकेले भोग लेना चाहते हैं इसी वजह से हमारे दुःख भी अपने हैं। फिर यह दोष बेमानी है कि मेरे दुःख में कोई साथ नहीं देता। सच यह है कि दूसरों का भरोसा हमें निडर बनाता है और अविश्वास डरपोक।

आँसुओं की बदलियों ने मेरी पलकों के पीछे अपना घर बनाया हुआ है। विदाई हो या मिलन, पुरानी याद या फिर ख़ुशियों का प्रसंग, पलकें मेरी मनोदशा की चुगली कर देती हैं। यह भावनात्मक कमज़ोरी मुझे विरसे में मिली है। लोग कहते हैं कि भावुक होना कमज़ोरी है लेकिन मैं भावनाओं का एहतराम करता हूँ और उसका एहसानमंद भी हूँ क्योंकि बदलते ज़माने की अंधी दौड़ में मैंने जब भी रिश्तों या नैतिकता को कुचलकर भागना चाहा है; सच्चाई का बैरियर मेरी राह में बाधा बनकर खड़ा हो गया है। इसीलिए मैं भावनाओं से भागता नहीं, उनका सम्मान करता हूँ। एक लम्हा लगता ज़रूर है कि भावना के बस में कहीं अपना नुकसान न कर बैठूँ लेकिन एक बार फिर मुझे रिश्ते, दोस्ती और नेक ख़याली बड़ी नज़र आने लगती है। इन्हीं भावनाओं का असर है कि मेरी क़लम मानवीय भावनाओं, मानवीय रिश्तों और संबंधों की बुनियाद के अंतर्मन में विचरण करती रहती है।

मैं कवि नहीं हूँ, कवि की सोच तो वहाँ से प्रारंभ होती है जहाँ आम सोच विराम पा लेती है। कवि बैठे-बैठे दूर तक देखता रहता है। मैं बाज़ारों के बीहड़ से जूझता एक ऐसा आदमी हूँ जो अपने दायरे से बाहर नहीं निकल पाता है। दिनभर व्यवसाय, प्रतिस्पर्धा और कॉर्पोरेट कल्चर के कोलाहल और दुनियादारी के हलाहल से बेज़ार होने के बाद देर रात अपने घर पहुँचता हूँ। रात का सन्नाटा मेरे ज़हन में उथल-पुथल करता है। मैं अपनी टेबल पर आता हूँ और काग़ज़-क़लम लेकर जो कुछ लिख पाता हूँ वह जस का तस आपके सामने है। यदि आप उसे कविता मानते हैं तो यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है।

अंतर्मन की कविताएँ - मेरा नया काव्य संग्रह है। इसमें कुछ कविताएँ पूर्व प्रकाशित संग्रह 'इर्दगिर्द' से भी ली गई हैं। गुज़ारिश इतनी भर है कि आप सिर्फ़ यही सोचकर मेरी कविताओं को पढ़ लीजिएगा की एक बनिये ने बहीखाता लिखने के अलावा भी कुछ लिखने की जुर्रत की है। मेरी कविताएँ मेरे मन की सैल्फ़ी है।

पचास की पायदान पर आकर मैं राहत और इत्मीनान महसूस कर रहा हूँ। मेरी ख़ुशकिस्मती है कि मुझे एक संस्कारशील परिवार मिला, नसीहत देने वाले माता-पिता और भाई-बहन मिले, अवसाद से परे रखने वाली जीवन संगिनी मिली और ज़िंदगी का जश्न एवं हौसला क्या होता है यह बताने वाली नौजवान पीढ़ी भी मिली। बेपनाह मुहब्बत करने वाले दोस्त, व्यवसायिक साथी और हर वक़्त अपना फ़र्ज़ अदा करने वाले स्टाफ़ के साथी हमेशा साथ खड़े नज़र आए। मैं सबके प्रति अनुगृह से भरा हुआ हूँ। इन सब ने मुझे प्रेम नहीं दिया होता तो मैं कविताएँ नहीं लिख पाता। यह सब मेरी कविताओं के अजर-अमर पात्र हैं। 'अंतर्मन की कविताएँ' को सजाने वाले स्नेहिल भाई संजय पटेल और उनकी टीम 'एडराग' मेरी ज़िंदगी का सरमाया हैं। भैया प्रिंटर्स के उत्कृष्ट मुद्रण ने मेरे प्रकाशनों को मज़बूत बुनियाद दी है।

मैं कालजयी शायरी के हस्ताक्षर मुनव्वर राना साहब के लिए शुक्रिया शब्द छोटा है। वे अदब की दुनिया के बादशाह हैं। उन्होंने आलोक की अकिंचन कविताओं के पहले एक पन्ना लिखकर इस किताब को अनमोल ख़ुशबू दी है। शुक्रगुज़ार हूँ उस परमात्मा को जो मुझे लिखने-पढ़ने और अच्छी सोहबतों का रास्ता दिखाता है।

'अंतर्मन की कविताएँ'... बहुत आदर के साथ आप तक।

कुछ मेरे मन की... कुछ जन-जन की।

www.facebook.com/aloksethii
www.aloksethi.in

आपका अपना
आलोक सेठी

शब्दों का सफ़र

▲ बिखरते संबंधों को जोड़ने का एक प्रयास

▲ पर्यटन को आसान बनाने वाला दस्तावेज़

▲ भावपूर्ण कविताओं का ताना-बाना

▲ माँ की महिमा का अनूठा ग्रंथ

▲ अनमोल संदेशों की महक

▲ रोजमर्रा से जुड़ी छोटी-छोटी पर महत्वपूर्ण बातें

▲ रिश्तों की पड़ताल करती ऑडियो बुक

▲ जुझारू ज़िंदगियों के अफ़साने

अंतर्मन की कविताएँ

आलोक सेठी

बड़ा भाई

तू सो जा;
मैं चला जाऊँगा स्टेशन,
ले आऊँगा मेहमानों को।

मेरे पास है अभी
ढेर सारे कपड़े,
नये दिलवा दो, छोटों को।

मैं जाग लूँगा अस्पताल में
ताऊजी के पास,
तुम सब चले जाओ घर।

बारात में जाना है क्या ?
छोटों को भेज दो
मैं संभाल लूँगा दुकान।

...बचपन से, बड़े भैया से
सुनता आ रहा हूँ
ऐसी हज़ारों हज़ार बातें।

क्या
सचमुच इतना कठिन है
बड़ा होना...?

कड़वे सच

एक बाइक पर तिबल सीट
और उसके बाद फुल स्पीड
टोके पुलिस तो
दादागिरी नेतागिरी का वार है
उससे से कहेंगे...हमें भारत से प्यार है।

क़लम से करेंगे कलाकारी
रेल, इमारतों में चित्रकारी
दिल-दिमाग़ में गंदगी का अंबार ही अंबार है
उससे से कहेंगे... हमें भारत से प्यार है

प्लास्टिक तिरंगे से सजाएँगे संस्थान
अगले ही दिन उसे दिखाएँगे कूड़ादान
राष्ट्रगीत पर खड़े होने को नहीं तैयार हैं
उससे से कहेंगे... हमें भारत से प्यार है

बीच सड़क पर गाड़ी लगाएँगे
तेज़ हॉर्न से झाँकी जमाएँगे
रेलवे क्रॉसिंग खुलते ही
रेस लगाने वालों की भरमार है
उससे से कहेंगे... हमें भारत से प्यार है

जाने-अनजाने वही कहानी
ऊल-जलूल ढेरों मनमानी
इन कामों से देश शर्मसार है
उससे से कहेंगे... हमें भारत से प्यार है

पहले हम सुधारें
अपना आचरण, अपना व्यवहार...
फिर उससे से कहें
हमें भारत से है प्यार...

सत्यमेव जयते

दुकानदार कहता है
बेफ़िक्र रहिए भाई साहब
ये तो घर की ही दुकान है
पर फिर चिपका देता है
नकली, महँगा सामान

नेता कहता है-
मैं करना चाहता हूँ
आपकी सेवा
पर फिर देखते ही देखते
चट कर जाता है सारा मेवा

सन्यासी कहता है
माया मिथ्या है, महाठगिनी है
पर फिर, फुर्र हो जाता है
अपनी बेशक़ीमती कार में

डॉक्टर शपथ लेता है
मेरा रोम-रोम समर्पित
सेवा के लिए
पर फिर मौक़ा मिलते ही बंद कर देता है
अपना मोबाइल

सत्यमेव जयते के
इस देश में
कभी होता होगा सत्य विजयी ?
आज तो,
जो विजयी हो रहा है, वही सत्य है।

काश ! हम समझ पाते

पैसे बचाते हुए घर ख़र्च चलाना भी
उतना ही मुश्किल है
जितना पैसा कमाना

बच्चों को बड़ा करना भी
उतना ही मुश्किल है
जितना व्यापार को बड़ा करना

पारिवारिक संबंध निभाना
उतना ही मुश्किल है
जितना व्यावसायिक संबंध निभाना

देर रात सोकर
सुबह सबसे पहले उठना भी
उतना ही मुश्किल है
जितना दिनभर बाज़ार में रहना

प्रशंसा की उम्मीद के बग़ैर
हमेशा उलाहना सुनना
उतना ही मुश्किल है
जितना बॉस से डाँट खाना

काश ! हम समझ पाते
कोई है
जो जी रहा है सिर्फ़
हमारे और
बच्चों के लिए...

पिता

व्यस्तता कम नहीं थी उनकी
फिर भी उन्होंने
हमारे लिए समय निकाला
हर रोज़
कुछ नया सिखाने के लिए...
दुनिया दिखाने के लिए...

परेशानी पूँजी की कम नहीं थी उन्हें
फिर भी उन्होंने हमारे लिए
पैसे जुटाए
मनपसंद कपड़ों के लिए
मोटर साइकिल के लिए

थकान कम नहीं थी उनकी
फिर भी उन्होंने हमारे लिए
ताक़त जुटाई
हमारे लिए घोड़ा बन
साथ खेलने के लिए

तनाव कम नहीं थे उन्हें
फिर भी वे हमारे सामने
सदा मुस्कुराते रहे
हिम्मत बन
हौसला बढ़ाने के लिए

उमंगे कम नहीं थी उनकी
फिर भी वे अपने सपने कुचलते रहे
हमारे सपने साकार करने के लिए
वर्तमान और भविष्य के लिए

रसूख कम नहीं था उनका
फिर भी वे अपना
स्वाभिमान गिरवी रखते रहे
हमारे एडमिशन के लिए
नौकरी, व्यवसाय के लिए

सोचे हम...
जो कल तक हर पल
मरते रहे
हमें ज़िंदा रखने के लिए
क्या आज हमारे पास
कुछ पल हैं
उनके लिए...

सच्चा अनुयायी

नज़र आता है मुझे
प्रातः स्नान, मंदिर दर्शन
फिर पूजा पाठ एवं आराधना
फिर साँझ में गीता का
सस्वर पाठ करता हुआ
एक सत्पुरुष।

नज़र आता है मुझे
प्रातः स्नान कर दिन-भर
अपने काम-काज में व्यस्त
साँझ तक थक कर
चूर-चूर होता
एक कर्मयोगी पुरुष।

जब देखता हूँ दोनों को
तो फ़ैसला नहीं कर पाता
कि कौन है
गीता का सच्चा अनुयायी...?

एक वो...
जो गीता पढ़ रहा है!
या एक वो...
जो गीता को जी रहा है!

अपने

सपने तो
सिर्फ़ सपने होते हैं
और
अपने भी
सिर्फ़ अपने होते हैं।

चाहे
सपनों को अपना लेना
अपना बना लेना
पर...
कभी जीवन में
अपनों को
सपना मत बनाना। ■

अपनों से दूर

मुझ तक आने के लिये
हो रिज़र्वेशन की उहा-पोह
बदलना पड़े गाड़ियाँ
घंटों बोझिल सफ़र
पापा...पापा...
मत भेजना मुझे
अपनों से इतना दूर।

सूनी रह जाए मेरी
राखी और भाई-दूज
तरस जाऊँ अपनों के
चेहरे और बोली के लिये
आ ना पाऊँ आपके
दुःखों को आधा और
ख़ुशियों को दुगना करने
पापा...
मत भेजना मुझे
अपनों से इतना दूर।

मिठाइयाँ पीहर की,
दादी के हाथों की मठरी,
अपने क़स्बे के जाम-जामुन,
मम्मी की चिट्ठियाँ
और...
सखियों के हँसी-ठहाके,
मुझ तक आते-आते ही
हो जाएँ हवा में गुम...।
पापा...
मत भेजना मुझे
अपनों से इतना दूर। ■

(निर्मला पुतुल की विख्यात कविता 'इतनी दूर मुझे मत ब्याहना बाबा' से अभिप्रेरित)

आत्महत्या

आदमी ग़लत सोचते हैं।
कि...
वो अकेला ही मरता है
और
मौत को गले लगाकर
वो पा लेगा समस्त झंझटों से
मुक्ति...

पर वो कहाँ मरता है अकेला
उसके साथ वो
मर जाते हैं बेबस पिता
लाचार माँ, एक सुहाग
और बेटे-बेटियाँ भी।

ढेर सारे सपने
त्यौहार भी,
उमंग भी,
उल्लास भी।

धीरे-धीरे
सारी दोस्ती, रिश्ते
और संबंध भी...
जो उसके जीते-जी
ख़ूब चहकते थे...
ख़ूब महकते थे...।

बाबूजी

मुर्गे की बांग के साथ ही
चल पड़ते थे बाबूजी
अपनी पुरानी साइकिल लेकर
दोपहर का खाना, बमुश्किल
वो भी सबके बाद
फिर आते, देर रात
थके मांदे,
था यही क्रम सतत्...
अनवरत्।

कुछ भी तो नहीं बदला
बदला है तो सिर्फ़
साइकिल की जगह स्कूटर
दौड़ रहे वे आज भी सतत्...
अनवरत्।

पूरी करने के लिये
फ़रमाइशें...
पहले बेटे-बेटियों की
और अब
पोते-पोतियों की
उसी तरह सतत्...
अनवरत्।

बहना

यादों के पन्नों से
कभी-कभी झाँकने लगता है
वो सुनहरा बचपन...

कितना मज़ा आता था
बहना तुम्हें सताने में
संतरे के छिलके लिये
ढूँढते रहते थे मेरे हाथ
तुम्हारी आँखों को
झाड़ू की सींक लिये
ढूँढता था मैं; तुम्हारे कान।
खींच लेता था कुर्सी
तुम्हारे बैठने से पहले ही
और तोड़ देता था टांग
तुम्हारी जान से प्यारी गुड़िया के।
कितने ख़ुशी मिलती थी
तुम्हारी चुगली कर
सज़ा दिलाने में,
तुम्हारी सहेलियों को चिढ़ाने में
और तुम्हारी बनाई रंगोली पर
साइकिल चलाने में।

तब हमेशा कहती थी
मम्मी, मुझसे...
मत सताया कर, पछताएगा
जब चली जाएगी...
ये ससुराल।

दूर कहीं बज रहे हैं
रेडियो पर...
राखी के गाने,
और मेरा गला भर्राकर
कह रहा है भीगी पलकों से...

मम्मी;
तुम सच कहती थीं।

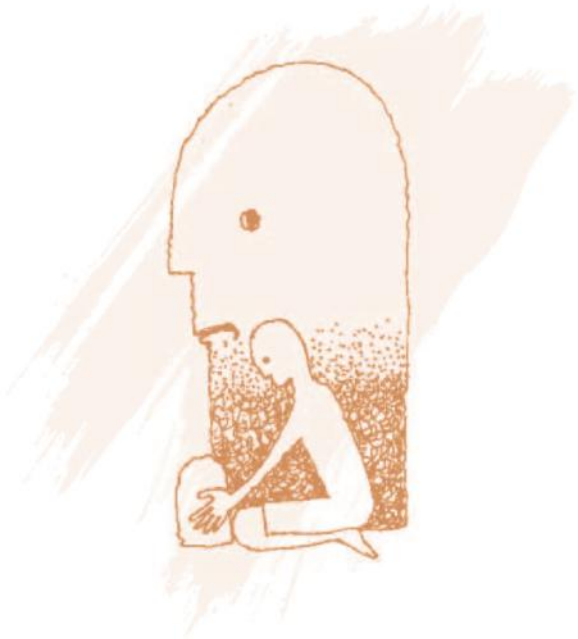

बचपन

बरसाती हरी घास में
ढूँढकर लाता मैं
वह मख़मली लाल 'गोकुल गाय'...
सहेजता उसे
माचिस की डिबिया में
और खिलखिलाता ऐसे
जैसे पा ली हो मैंने
दुनिया की सबसे बड़ी दौलत।
साइकिल का एक पुराना टायर
दौड़ाता मैं दूधतलाई की पाल पर
और इतराता ऐसे
जैसे आ गई हो मेरे पास
'मर्सीडीज़ कार'।

गीली मिट्टी से बनाता
'एक घरौंदा'
सजाता उसे मैं....
टूटी चूड़ियों, सीपियों से
और इठलाता ऐसे
जैसे बना ली हो मैंने
दुनिया की सबसे बड़ी इमारत।

तब छोटी-छोटी चीज़ों से ही
चहक उठती थी मेरी बोली
आज न जाने क्यों हमेशा...
ख़ाली लगती है मेरी झोली।

ऐसा क्यों होता है....
बचपन तो होता है
मालामाल
पर जैसे ही
इंसान हो जाता है बड़ा
होता जाता है
कंगाल...और कंगाल...।

बँटवारा

मैंने कहा एक अभिन्न से
दीवाली मुबारक
उसने तुरन्त किया प्रतिकार
बधाई कहो 'बधाई'
मुबारक तो 'वो लोग' कहते हैं।

रोज़ होते हैं ऐसे वाक़ये
रोज़ समझाए जाते हैं फ़र्क़
गीत हिन्दू है और
ग़ज़लें मुसलमान
केसरिया हिन्दू है और
हरा मुसलमान
गाय हिन्दू है और बकरी मुसलमान

हिन्दी हिन्दू और उर्दू मुसलमान
ये टोपी हिन्दू और
वो टोपी मुसलमान

इसी तरह बाँटने का क्रम
जारी है अनवरत...

सही तो कर रहे हैं हम
क्योंकि जोड़ने में तो है
बहुत कठिनाई
और बाँटना...
बाँटना तो है सबसे आसान। ■

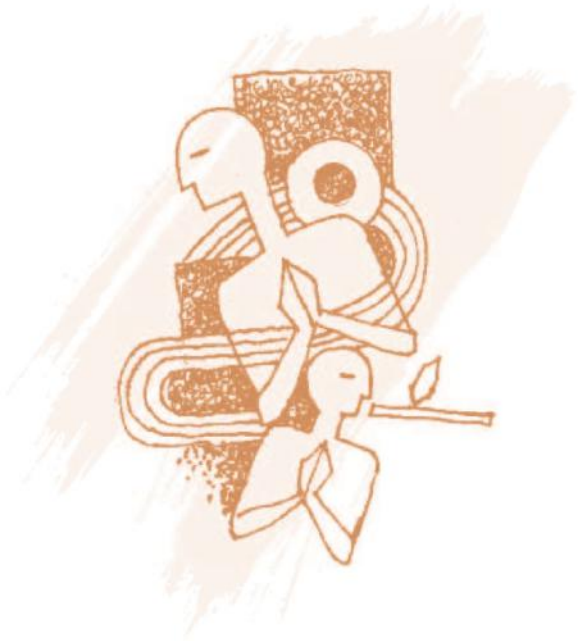

छूटा प्रभु का साथ

गिल्ली-डंडा खेलते-खेलते
बचपन में जब कभी भी
हारने लगता था मैं
तब...
पूरे ध्यान से, आँखें मूंद
करता था प्रभु का स्मरण
और फिर पूरे मनोयोग से
मारता था गिल्ली को डंडे से
और देखते ही देखते
जीत मेरे चरण चूमने लगती।

इस तरह हर बार
जब-जब मुझे
उसकी ज़रूरत लगती
मेरे पुकारते ही
वो खड़ा हो जाता था....
मेरे साथ।

आज; जब मैं
सारे साम-दाम, दंड-भेद,
लगाने के बाद भी
हारने लगता हूँ अपनी लड़ाई,
स्मरण करता हूँ उसी प्रभु का
पर वो आकर नहीं खड़ा होता....
मेरे साथ।

कहता है...
'ख़ुद ही निकलो
अपने बनाये फंदों से।'

प्रभु का सम्बल पा सकूँ
वो निर्मल निश्छल मन
शायद...नहीं बचा है
अब मेरे पास।

दशहरा

हर साल
जलाया जा रहा है
पुतला एक आदमी का
जिसकी बीस आँखों ने
ग़लत निगाह से देखा था
एक नारी को...

पर उन्हें कौन जलाएगा
जिनकी दो आँखें
ग़लत निगाह से देखती हैं
बीसियों नारियों को...? ■

फुरसत

चाहता हूँ कुछ पल
अब मैं अपने लिये भी...

चाहता हूँ...
कहीं अकेले बैठ
गुम हो जाऊँ
भूले-बिसरे गीतों में।
बन जाऊँ घुमक्कड़
देख पाऊँ
बनारस की सुबह,
लंदन की दोपहरी,
अवध की शाम,
और पेरिस की रात।
ठहाके लगाऊँ
जिगरी दोस्तों के साथ,
डूब जाऊँ
बचपन की शरारती यादों में।

झमझमाती बरसात में
भीगते हुए निकल जाऊँ
दूर तलक।
बच्चों के साथ
मैं भी बन जाऊँ बच्चा
करता रहूँ, धींगा-मस्ती।
ढलती शाम
बैठ किसी तालाब की पाल पर
निहारता रहूँ
जीवन संगिनी को।

आपाधापी भरे जीवन में
कहाँ कर पाया, यह सब...।
चाहता हूँ कुछ पल अब मैं
अपने लिये भी....।

गुरुजन

जैसे ही एक फूल खिलता है
उसकी सुगंध फैल जाती है
चहुँओर...
उसके रास्ते से कौन गुज़रा
यह फूल नहीं पूछता
जो भी गुज़रता है उसके पास से
सुगंध उसे अवश्य मिलती ही है
ये काम का है, वो काम का नहीं
मित्र है, शत्रु है
तटस्थ है, कौन है ?
ये सवाल उसकी नज़रों में
असंगत हैं।
फूल की तो ख़ुशबू मिलेगी...
हर उस राह से गुज़रने वाले को।

कहाँ फ़र्क़ है...
एक फूल और
एक शिक्षक में
वो भी करते हैं
यही सब...

नहीं...!
एक फ़र्क़ तो है
फूल की तो क़द्र हो जाती है
उसके पास जाते ही
पर...
शिक्षक की क़ीमत
पता लगती है हमें
उनसे दूर जाने के बाद...

दिल से

जीवन में
अवसाद में,
दुःख में,
दर्द में,
कई लोग
दिल से होते हैं साथ
थपथपाते हैं कंधा।
पर...
उल्लास में,
ख़ुशियों में,
सफलताओं में,
अंतर्मन से ख़ुश होने वाले
चंद ही लोग होते हैं.... ।

न जाने ऐसा क्यों होता है....?

घरौंदा

एक चिड़िया की तरह
मानव भी इकट्ठा करता है
एक-एक तिनका।

मारता है अपने मन को
जलाता है अपने तन को
बचाता है...
बूँद-बूँद धन की
तब जाकर कहीं सहेज पाता है
एक-एक तिनका।

उन तिनकों को जोड़कर
बनाता है...
एक घरौंदा।
अपनों का, अपने सपनों का।

जानना चाहते हो
कितनी ख़ुशी मिलती है
अपने बनाये घर में...।

जाकर पूछिये उनसे
जिन्होंने काटी है
अपनी ज़िंदगी...
किराये के मकानों में।

होस्टल में पढ़ रही बेटी

शादी से पहले ही
विदा हो जाती है
होस्टल में पढ़ रही बेटी...

जाते ही उसके
जाने कहाँ गुम हो जाती है
रौनक सारे घर भर की
लज़्ज़तदार खाना भी न जाने क्यों
नहीं उतर पाता गले से
और
जागती आँखों के सपनों में
नज़र आती रहती है
मुँह पर पानी के छींटे
मार-मारकर
होस्टल में पढ़ रही बेटी।

रंगोली के डिब्बे, बर्फ़ के गोले
ठेले पानी-पतासे के,
घर के कोने में पड़ी
धूल खाती उसकी साइकिल
पुकारती रहती है, फिर भी
जल्दी नहीं आ पाती...
होस्टल में पढ़ रही बेटी।

छुट्टियों में उसके आते ही
निखर जाता है
रंग घर-भर का
फ़रमाइशों की लंबी फ़ेहरिस्त
यह खाना है, वहाँ जाना है
धूम-धड़ाका, धींगा-मस्ती
पर रोके से कहाँ रुकता है
सरपट दौड़ लगाता
कैलेण्डर

और
आँखों में बादल,
गालों पर बरसात लिये
फिर विदा हो जाती है...
होस्टल में पढ़ रही बेटी।

काश

देखता हूँ
जब कोई बच्चा
छोटी सी किसी बात पर
इतना खिलखिलाता है कि
हँसते-हँसते उसके
पड़ते जाते हैं पेट में बल।

कहता है मेरा मन
जाकर पा लूँ उससे
उससे यह निरछल हँसी।

देखता हूँ
जब कोई बच्चा
मन में लगते ही
किसी टीस के
रोने लगता है
फूट-फूट कर
कहता है मेरा मन
पा लूँ उससे
बेतकल्लुफ़ होकर
ये रोने का साहस।

काश...ऐसा कर पाता। ■

कौन है शिक्षित

दिल्ली के भीड़ भरे रेस्त्राँ में
जेसिका को खुले आम
गोली मारने के बावजूद
'पढ़े-लिखे' गवाहों के
मुकर जाते ही
बरी हो जाते हैं हत्यारे।

सुदूर जंगल में
काले हिरण को मारने पर
'अनपढ़' ग्रामीण की गवाही से
चला जाता है नायक भी
शिकंजों के पीछे...।

कोई तो है

बचपन की सर्द रातों में
होते ही ठंड का अहसास
कोई ओढ़ा जाता है मुझे रज़ाई
और मुझे आ जाती है नींद सुहानी
हर रात-हर बार।

सफ़र की तैयारी करते-करते
लाख मनाही के बावजूद
रख देता है कोई एक डिब्बा
रास्ते में पेट कुलबुलाते ही
मिटा देते हैं मेरी भूख
उसमें रखे पराठे और अचार।

जीवन में विषमता आने पर
जब बंद नज़र आये सारे-रास्ते
तभी रख गया कोई मेरे वास्ते
कुछ मुड़े हुए नोट, ज़ेवर, एफ़.डी.
और कर गया जीवन में अतुल उपकार।

कुटुम्ब में साथ रहते-रहते
जब फटने लगी प्रेम की चादर
तभी कोई आया सुई-धागा लेकर
और जोड़ गया फिर से पूरा परिवार।

कोई तो शक्ति है...
जो बैठी है मेरे ही घर में
और मैं मूरख-नादान
ढूँढ रहा हूँ उसे...
मंदिर-मस्ज़िद और
गुरुद्वारे-गिरिजाघर में।

क्षमा

सुई...
होती है तीखी और तेज़
प्रकृतिवश;
देती है गहरी चुभन
गहरे तक भेद कर
बहा देती है लहू।
धागे से मिलकर
बदल जाता है उसका स्वभाव
मिलाती है, बाँधती है, जोड़ती है
देती है जीवन...
भर देती है घाव।

न जाने क्यों...?
छोटा महसूस करते हैं हम
हमारे
हमारे बैर भाव की सुई को
क्षमा भाव के
मुलायम धागे से
मिलाने में... ।

कोसना

कुछ लोग कमाना जानते हैं
पर भोगना नहीं जानते
कुछ लोग भोगना जानते हैं
पर कमाना नहीं।

ऐसे न होंगे बहुत
जो जानते हैं
कमाना भी और भोगना भी।

पर ऐसे मिल जाएँगे बहुत
जो न तो जानते हैं कमाना
और ना ही जानते हैं भोगना
पर जानते हैं सिर्फ़...कोसना। ■

क्या तुम कभी मिले हो ?

अपनी जान जोख़िम में डाल
किसी जलती बस्ती को बुझाते
पराक्रमी युवाओं से।

राखी पर
किसी उदास बहना के आगे
हाथ बढ़ाए
उस युवा से; जो कहता है
'बहन; मन मत कर छोटा
मुझे राखी बाँध दे।'

दहेज़ के लालच में
वापस चली गई बारात के
दुःख में रोते बाबुल के सामने
खड़े उस अपरिचित युवा से
जो कहता है...
'मैं करूँगा शादी
तुम्हारी लड़की से।'

क्या तुम कभी मिले हो ?
अगर नहीं मिले तो ज़रूर मिलना
फिर आप कभी नहीं कहेंगे
कि...
नये दौर के सारे युवा
निकम्मे हैं
नालायक हैं,
नाकारा हैं।

लिफ़्ट और सीढ़ी

परिश्रम
मज़बूत होता है
सीढ़ी की तरह
और...
क़िस्मत
लचर होती है
लिफ़्ट की तरह।

बंद भी हो सकती है लिफ़्ट
कभी-कभी/अचानक!
पर लाख विषमता हो
सीढ़ी कभी नहीं छोड़ती
हमारा साथ।

उसी के बल पर
हम पा सकते हैं
जीवन में ऊँचाई...
और ऊँचाई।

माएँ कहतीं हैं...

माएँ कहती थीं
तूफ़ानों का रुख़ मोड़ आना,
माएँ कहती हैं...
लहरों की तरफ़ मत आना।

माएँ कहती थीं
तुम लेकर आना संगी-साथी,
माएँ कहती हैं...
सुन; घर में हल्ला मत करना।

माएँ कहती थीं
मिल बाँट खाना अच्छा है,
माएँ कहती हैं...
देख ! बेटा भूखा मत रहना।

माएँ कहती थीं
लड़ने से रोको दुनिया को
माएँ कहती हैं...
झगड़े में कभी मत पड़ना।

माएँ कहती थीं
जा पूछ अपने ताऊ से
माएँ कहती हैं...
चुप रहना, उनसे मत कहना।

कहाँ गई वो...
पन्ना धाय सी निडर अम्मा... ।
हमें बना रही हो...
क्यों; फूल सी कोमल, मम्मा... । ■

मूल से प्यारा सूद

कभी-कभी
होने लगती है मुझे जलन
अपने बच्चों से !
जब देखता हूँ
दादी; कितने जतन से
बनाती है व्यंजन
उनके मनपसंद
और खिलाती है उन्हें
एक-एक कोर।

जब देखता हूँ
दादा; दौड़-दौड़ कर
पूरी करते हैं उनकी
हर तमन्ना हर ख़्वाहिश।
बच्चों के स्कूल से आने में
हो तो जाए ज़रा सी देर
उनकी आँखों से
बहने लगती है जलधार,
बच्चों के घर आते ही
उमड़ जाता है
बेइन्तहा प्यार।

हे प्रभु...
अगले जनम में
भले ही कुछ और
दीजियेगा न दीजियेगा
पर मुझे
दादा-दादी की गोद
ज़रूर दीजियेगा।

नाहक ही घबराते हैं

कहते हैं...
नहा लो इस नदी में
बहुत बड़ा लगा है 'मेला'
मिट जाएँगे जन्मों के पाप
ख़त्म हो जाएगा हर झमेला।

कहते हैं...
इस पर्वत की कर लो
एक वंदना
मिल जाएगा आपको
करोड़ो उपवासों का फल।

कहते हैं...
इस गुरुद्वारे में और उस मज़ार पर
और दीजिये 'मत्थाटेक'
हो जाएगा सारा गुनाह माफ़
हो जाओगे बिल्कुल नेक।

कहते हैं...
मरते समय कर दो एक गाय दान
पुराणों में लिखा है बिल्कुल साफ़
हो जाएँगे जीवन भर के
सारे क़र्ज़ माफ़।

देखिये कितनी आसानी से
हम सारे पापों से मुक्त पा सकते हैं
और एक हम हैं जो....
जीवन भर नाहक ही घबराते हैं। ■

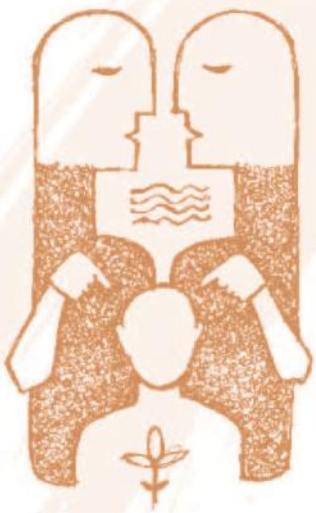

निंदा रस

मित्र;
आओ चलें सफल लोगों में
बुराइयाँ ढूँढने...।

कहते हैं ढूँढने से
मिल जाते हैं भगवान भी
फिर ऐसा कौन सा सफल आदमी है
जिसमें हम नहीं ढूँढ पाएँगे
एक भी बुराई...।

उनमें बुराई मिलते ही,
और निंदा करते ही
हो जाएगा
हमारी कुंठाओं का ख़ात्मा।

अगर असफल होने के बाद भी
हमें जीना है सारा जीवन
सीना तान के,
तो ढूँढते रहेंगे हम...
हर सफल आदमी में
कोई बुराई।

जीवन में बिना कुछ किए भी
ख़ुश रहने का
इससे बेहतर तरीका...

मेरी नज़र में तो कोई दूसरा नहीं। ■

'पहचान' बड़े होने की

जब भी हम कहीं जाते हैं
बस में
तो निःसंकोच चालू कर देते हैं
वार्तालाप...
अपने सहयात्री से...

जब भी हम कहीं जाते हैं
ट्रेन की उच्च श्रेणी में
तो बहुत विचार कर
शुरू कर पाते हैं
वार्तालाप...
अपने सहयात्री से....!

जब हम जाते हैं
किसी वायुयान में
तो घंटों बीत जाने पर भी
नहीं जुटा पाते हैं हिम्मत
वार्तालाप की...
अपने सहयात्री से !

जैसे-जैसे हम जाते हैं
बड़े लोगो में
ख़त्म होती जाती है
सारी
सरलता, सहजता, सरसता।

क्या इनका ख़त्म होना ही
पहचान है...
बड़े होने की।

दो ज़िंदगी

पूसी नहाती है
इंपोर्टेड शैंपू और साबुन से
हमारी जूली को तो
खाने के नख़रे ही हैं बहुत
शेरू को सिखाने आता है
रोज़ एक ट्रेनर
जैकी को घुमाना पड़ता है
शाम को कार में
टॉमी गर्मी में
सो ही नहीं पाता
बिना कूलर के.... ।

कंपकंपा रहा है मंगतू
ठंड में नहीं है स्वेटर ।
कड़वा का बच्चा,
मर गया कुपोषण से ।
नत्थू नहीं भर पाया,
बच्चे की कॉलेज की फ़ीस ।
रामू के पास नहीं थे जूते,
कल पाँव में काट खाया
एक साँप,
पुलिस ने बेरहमी से पीटा
आधी रात को
फुटपाथ पर सो रहे
भिखारियों को ।

पलाश

फागुन के आते ही
चारों ओर खिल उठते हैं
पलाश के नन्हे-नन्हे फूल।

पलाश...
जब-जब देखता हूँ
तुम्हारी चमकती-दमकती
केसरिया आभा
सदा कौंधता है
एक प्रश्न; मानस पटल पर
तुम्हें क्यों नहीं कहा जाता
'फूलों का राजा'

तुम्हारे स्पर्श मात्र से ही
हो जाते हैं
शिशिर शरारती और
पुरवाई पागल
तुमसे ही है भगोरिया
और होली की मस्ती
तुम ही से राधा किशन
और गोपियों की टोली
तुम पर लिखे गये
पन्ने अनगिनत
पर किसी ने भी नहीं लिखा
कि तुम हो 'फूलों के राजा'

तुम्हारी जड़ की कूचियों से
रंगे हैं सबके सपनों के घर,
तुम्हारे तन की औषधि से
निरोगी हो गये असंख्य रोगी
तुम्हारे पत्रों की पत्तल पर
बिछे हैं उत्सव और परिणय
धन्य हो तुम
जिसके रोम-रोम में
निहित है परहित
फिर भी तो नहीं बन पाये तुम
'फूलों के राजा'

धीरे-धीरे मेरे प्रश्न की गाँठ
खुलने लगती है
मेरे मन की गुत्थी
तभी सुलझने लगती है...
सच तो है
राजा वो है जो रहे अनुकूल में
एक तुम हो कि
खिलते रहे प्रतिकूल में
राजा गुलाब रखता है
कांटो की फौज
अल्हड़ हो तुम
सदा अकेले ही करते मौज
तुमने कब लगायी
अपनी क़ीमत
कब बिके गमलों और
बाज़ारों में
कहाँ भाया तुम्हें
बंधना उपवनों में
तुम तो वो हो जो रहे
पत्थरों और बंजर वनों में

नहीं सीखा तुमने
बलखाना, इठलाना, इतराना,
तुमने तो सिखाया
डाली पर ही मुरझाने,
कुम्हलाने से
बेहतर है पगडंडी पर
बिछ जाना।

सदैव आगे बढ़कर
तय किया तुमने
शिखर के कलश की जगह
बनूँगा नींव का पत्थर

तभी मिल गया मुझे
मेरे प्रश्न का उत्तर...

नींव का पत्थर
कहाँ कभी हो सकता है
फूलों का राजा!

पत्नी

घर में चश्मा ढूँढते हुए
झल्लाता हूँ मैं...
कि रख देती हो तुम
मेरी हर चीज़ इधर-उधर
तब निर्विकार भाव से कहती हो तुम
फँसाया हुआ है चश्मा आपने,
अपने ही सिर पर...!

बच्चों के नम्बर कम आने पर
बरस उठता हूँ मैं उन पर...
'निरे बेवकूफ़ हो तुम...
गये हो अपनी मम्मी पर
लेकिन कुछ महीनों बाद
जब आ जाते हैं वे कहीं प्रथम
कर लेता हूँ मैं; अपनी कॉलर टाइट
और कहता हूँ...
देखो मैं न कहता था...
'मेरा डुप्लीकेट है'!

और मुस्कुरा देती हो तुम, हौले से।

पड़ौसी की भिजवायी सब्ज़ी
तारीफ़ करते, चटखारे लेते,
चट कर जाता हूँ मैं
मुँह दबाकर हँसते हुए,
कहते हैं बच्चे...
ये तो बनायी थी; मम्मी ने ही।

खिसिया जाता हूँ मैं
पर तुम लगी रहती हो
ऐसे अपने काम में...
जैसे कुछ सुना ही नहीं।

प्रेम

प्रेम के समक्ष
हिमालय भी है बौना
प्रेम तो है
सागर से भी गहरा।

प्रेम है
जेठ की तपती
झुलसती दोपहरी में
सावन की शीतल फुहार।

प्रेम तो है
उद्दण्ड ठंड की
ठिठुरती सुबह में
चमकदार धूप की
शांत झलक।

प्रेम में है ख़ुशबू
सौंधी मिट्टी की
प्रेम में है स्वाद
सुदामा के चावल
और
शबरी के बेर का।

चाहे कितना भी लिखें
पर
शब्द कहाँ समर्थ हैं
प्रेम को लिख पाने में
आँखें भी बहुत छोटी हैं
इसे देख पाने में।

प्रेम तो बस...
एक अहसास है
इसे महसूस करो। ■

प्रिय

मुझे मालूम है
नहीं हैं तुम्हारी आँखें
झील जैसी नीली,
नहीं है तुम्हारी आवाज़ में
'तानसेन' का खनकता संगीत
नहीं है तुम्हारा क़द
'नीलगिरी' जैसा
और न ही नज़र आती है
तुम्हारी चाल में कोई हिरणी... ।
नहीं है तुममें
'चाणक्य' सी चतुराई।

लेकिन
तुम्हारी आँखों में है
प्रेम का गहरा समुन्दर
आवाज़ में है गुड़ सी मिठास
तुम्हारा क़द बेशक है
'पलाश' जैसा छोटा
लेकिन छायादार, बहुउपयोगी।
चाल में है
शांत नदी सी गंभीरता
और स्वभाव में हैं
वो सारी ख़ूबियाँ...
जो होना चाहिए
एक बेहतर इंसान में।

इसलिये हे प्रिये।
तुम हो सबसे प्रिय,
मेरे लिये।

पुरवाई

मुट्ठी से सरकती रेत की तरह,
गुज़र जाता है वक़्त...

कल की ही तो बात है
गुलाबी ठंड की एक सुबह
शीतल मदमस्त पुरवाई संग
परियों के देश से
अंगना उतरी...एक बिटिया।

गोदी में मचलती,
पाँव-पाँव ठुमकती,
तीन पहिये की साइकिल से
गिरती और संभलती,
खिलौना बन हम सबका
सारे घर को अपने पीछे दौड़ाती।

पहले तांगे में
फिर अपनी साइकिल
और एक्टिवा...
बढ़ते-बढ़ते बिटिया
पहुँच गई कॉलेज।

आ गए हैं दिन
उसकी विदाई के...
कलेजे का टुकड़ा
पूछ रहा है हमसे,
'क्या रह पाओगे मेरे बग़ैर...

बेटियाँ...
क्यों हो जाती है बड़ी
इतनी जल्दी...।

सच्चा दोस्त

सच्चा दोस्त
बरसाती तूफ़ान नहीं है
जो गरजते हुए आए
और
हमें भीगो कर चले जाए।

सच्चा दोस्त तो वो है
जो रहता है
हवा की तरह
चुपचाप
सदा हमारे आस-पास।

समझ

भगवान ने बनाये हैं
लोग; प्यार करने के लिये
और
वस्तुएँ; वापरने के लिये।

हमने समझा...

हैं वस्तुएँ प्यार करने के लिये
और
लोग वापरने के लिये।

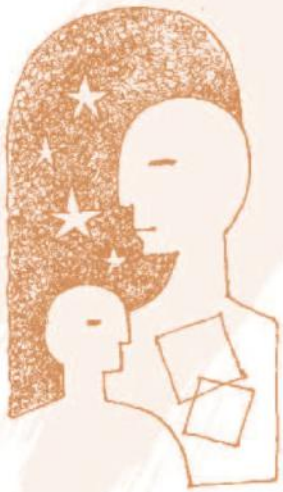

सांताक्लॉज़

हर वर्ष बजती है क्रिसमस में
जिंगल बेल-जिंगल बेल
और प्रकट होता है धरती पर
सांताक्लॉज़।

ख़ुशियों की सौग़ात लुटाता
झोले में तोहफ़े भर लाता
बचपन, पचपन सबको लुभाता
सांताक्लॉज़।

क्रिसमस का वो सांता तो आता है
सिर्फ़ एक बार...।

है ऐसा भी एक और सांता....
जो हर दिन तोहफ़े लुटाता है
घर की सारी, हल्की या भारी
हर फ़रमाइश
जिसके पास पहुँचकर
हो जाती है पूरी।

क्या ख़ुशी मिलती है बाँटकर
कैसे पाया जाता है कुछ देकर...
क्या होगा कोई
पिता से बढ़कर...
सांताक्लॉज़।

शहर हो गया मेरा खण्डवा

चौड़ी गलियाँ, खुले रास्ते
तांगों की टप-टप आवाज़ें
क्रांकीटों के नहीं थे जंगल
कभी न दंगा, हर पल मंगल
एक था क़स्बा, मेरा खण्डवा।

आपस में सब हँसी ठिठौली
छुपा-छाई और छुट्टी-संकली
बच्चों में बचपन था ज़िंदा
नहीं झूठ था, नहीं थी निंदा
एक था क़स्बा मेरा खण्डवा।

आलू-छौले, सफ़र की टिकिया
आठ आने में मिलती दुनिया
बेर गंडेरी, मन को छू ले
पेड़ों पर लगते थे झूले
एक था क़स्बा मेरा खण्डवा।

चौपालों पर जमती चौरस
सार खेलते अब्दुल-पारस
लंबी बातें, छोटी रातें
प्रेम बरसता, बन बरसातें
एक था क़स्बा मेरा खण्डवा।

अतिक्रमण का नाम नहीं था
शोर-गुल का काम नही था
पेड़ों पर कोयल का गाना
दूध-जलेबी, रबड़ी खाना
एक था क़स्बा मेरा खण्डवा।

तनाव लिये हैं त्यौहार हैं आते
स्कूटर से ऑटो टकराते
सड़कों पर चलता हुआ है दूभर
धूल-धुएँ को कोसे दिनभर
मिले जो क़स्बा ढूँढ कर लाना
शहर हो गया मेरा खण्डवा।

उम्मीद

दुनिया के सारे लोग
अच्छे हैं
जब तक कि आप
उनसे न करें
कोई उम्मीद...
आप भी दुनिया के लिए
बेहद अच्छे हैं
जब तक कि आप
पूरी करते रहें
उनकी उम्मीद !

विजेता

बहुत पतली लकीर होती है...

साहस और दुःसाहस में,
प्रशंसक और चाटुकार में,
अभिमान और स्वाभिमान में
चढ़ाई और उतार में,
सच और झूठ में,
आराम और आलस में,
मज़ाक और खिल्ली में,
शौक और आदत में...!

उससे कहीं कहीं अधिक पतली...
सफलता और असफलता में।

अफ़सोस...
जब तक इस लकीर का पता लगता है
तब तक मुट्ठी से सरकती
रेत की तरह...
गुज़र चुका होता है सारा वक़्त।

और कुछ नहीं बचता
सिवाय हाथ मलने के।

लेकिन...
होते हैं कुछ बिरले
जो देख पाते हैं
इस अदृश्य लकीर को
वो ही बनते हैं जीवन में
विजेता...।

बेटा, जा रहा है होस्टल

मठरी, लड्डू दिए हैं
खाते रहना

चादर उघाड़ देता है, नींद में
दबाकर सोना

टॉवेल याद से सुखाना
बरसात में भीगना मत

ग़ुस्सा बहुत आता है तुझे
क़ाबू रखना

रात को बाम लगा लेना
फ़ोन तो उठा लिया कर

मन लगाकर पढ़ना
मंदिर जाते रहना

बेटा, जा रहा है, होस्टल
और माँ वह भी तो जा रही है
बेटे के साथ-साथ...

टायर

घर से हो गए बेघर
कहाँ वतन अपना
होंगे टायर में दफ़न हम
ट्यूब होगा कफ़न अपना

उधार बेचकर
भटक रहे अब घर-घर
जीते जी कर दिया
लोगों ने बस हवन अपना

हज़ार बीस हो
या तेरह छह अट्ठाइस हो
धका-धका के इन्हें
दुःख गया बदन अपना

टारगेट और चैक
नींद में यही दिखते
उड़ गए बाल सब
लुट गया, चमन अपना

बीवी और बच्चे भी अब
बोर हो गए हमसे
किसे सुनाएँ बस
दर्द और रुदन अपना

टीबीआर, पीसीआर
एलसीवी, कभी ट्रैक्टर
इन्हीं में दिखता है भगवान
इन्हें नमन अपना

रात-दिन मरकर भी है
जेब ख़ाली की ख़ाली
सिल्लक का क्या पता
होता कहाँ गबन अपना ■

प्रोफ़ेशनल

मत रोइए
कमज़ोर नज़र आते हैं आप
पर हाँ
वहाँ ज़रूर रुआँसे नज़र आइए
जिनके दुःख में ग़मगीन होने पर
आपको मिल सकते हैं
बड़े फ़ायदे...

बेढंगे मत हँसिए
फूहड़ नज़र आते हैं आप
पर हाँ
उनकी उबाऊ बातों पर भी
ख़ूब ठहाके लगाइए
जिन्हें प्रभावित कर
आपको मिल सकते हैं
बड़े फ़ायदे

मत कीजिए झूठी प्रशंसा
चाटुकार नज़र आते हैं आप
पर हाँ
उनकी हर बात पर जयकारा लगाइए
जिनकी नाराज़गी से बचकर
आपको मिल सकते हैं
बड़े फ़ायदे

जीवन में अगर
आगे बढ़ना है तो
याद रखिए इन सारी बातों को
या सिर्फ़ एक शब्द ही
याद रखिए
'प्रोफ़ेशनल हो जाइए'

सतत्

माँ लगी रहती है
सतत...
काम ख़त्म होते नहीं
रात आ जाती है...
नींद ख़त्म होती नहीं
सुबह आ जाती है...

दुनियादारी

मुझे अक्सर अखरता है
जब बाबूजी बिना लाग लपेट
ग़लत तो ग़लत
और
सही को बोल देते हैं सही

मैं बैठे-बैठे
हाँ में हाँ मिला रहा था
जिन बेइमानों की
उन्हें सरेआम नापसंद कर
खड़े हो जाते हैं वे
उस ईमानदार के साथ
जो मेरे किसी काम का नहीं

दुकानकारी में कई बार
सोचने लगता हूँ मैं
ये मेरी तरफ़ से हैं
या फिर आए हुए
ग्राहक के साथ
उनका यह बर्ताव
कई बार
बिगाड़ देता है मेरे
कई काम
होते-होते

मुझे दुनिया
दिखाने वाले पिता
आप कब बनोगे
दुनियादार ?

किशोर कुमार खण्डवे वाला

ऐसा दीवाना जिसने कर दिया
दीवाना जग को
बहती मस्ती-सा एक दरिया था
हमारा किशोर

उसकी आवाज़ में
एक रोशनी-सी दिखती थी
सौंधी मिट्टी की महक जैसा था
हमारा किशोर

पाकर ऊँचाई भी
वो फलक के सितारों की
न भूला अपनी सरज़मीं वो था
हमारा किशोर

गले से गाकर पहुँचते हैं
लोग कानों तक
गाकर दिल से उतरा दिल में वो था
हमारा किशोर

आज भी गूँज रही कानों में
जिसकी 'उडलई हूँ'
सारी दुनिया में था वो अलहदा
हमारा किशोर

बिछाए पलकें राह तेरी
हम तो तकते हैं
आवाज़ देकर हो गया गुम वो
हमारा किशोर

करवा चौथ...

सुबह चाय लाकर
बतियाना चाहती हो तुम
पर मेरी निगाहे लगी रहती हैं
अख़बार पर...

भोजन परोसकर
कुछ सुनना चाहती हो तुम
पर मेरी निगाहें लगी रहती हैं
मोबाइल पर...

फ़ुर्सत में
कुछ दर्द बाँटना चाहती हो तुम
पर मेरी निगाहें लगी रहती हैं
टेलीविज़न पर...

महफ़िल में
कुछ सुनाना चाहती हो तुम
पर मेरी निगाहें लगी रहती हैं
दोस्तो पर...

यात्राओं में
खिलखिलाना चाहती हो तुम
पर मेरी निगाहें लगी रहती हैं
कैमरे पर...

मेरे लंबे जीवन के लिए
न जाने क्या-क्या करती रहती हो तुम
बिंदी, मंगलसूत्र, सिंदूर, उपवास
पर मैं क्या कर पाता हूँ तुम्हारे लिए...
सिवाय तुम पर एक लतीफ़ा बनाने के ▪

अवसर

भाग्यशाली वह
जो पा लेता है
कोई अवसर

बुद्धिमान वह
जो पैदा कर लेता है
कोई अवसर

पर सफलता तो उसी के चरण घूमती है
जो भुना लेता है
हर अवसर

बुढ़ापा

बूढ़े वे नहीं होते
जिनके बाल सफ़ेद हो जाते हैं
बूढ़े वे होते हैं
जो भूल जाते हैं हँसना

बूढ़े वे नहीं होते
जो अपने परिवार में ही
सिमट जाते हैं
बूढ़े वे होते हैं
जो शुरू कर देते हैं
ज़माने को कोसना

बूढ़े वे नहीं होते
जो दौड़ नहीं पाते
बूढ़े वे होते हैं
जो छोड़ देते हैं
चलने का हौसला।

बूढ़े वे भी नहीं होते
जो पहनते हैं पुराने क्रिस्म के कपड़े
बूढ़े वे होते हैं
जो कोसने लगते हैं
नए फ़ैशन को

बूढ़े होने से बचने का
सबसे आसान उपाय
चलते रहें, हँसते रहें
समय के साथ
मिलाकर ताल से ताल ■

मेरा साया साथ होगा

मत रो बेटे
मेरी तस्वीर के सामने
वहाँ नहीं हूँ मैं

मैं
तुम्हारे तपते बुखार में
ठंडे पानी की पट्टी हूँ

तुम्हारे आँसू पोंछता
रूमाल

तुम्हें ठसका लगते ही
पानी का गिलास हूँ मैं

जब बंद दिखे सारे दरवाज़े
अचानक नज़र आया रास्ता हूँ

नींद में तुम्हें ठंड लगते ही
रज़ाई हूँ मैं

दुर्घटना में बाल-बाल
बचा ले गया
वह एक क्षण हूँ

मत रो बेटे
मेरी तस्वीर के सामने
वहाँ नहीं हूँ मैं

उनको भी तो मिले रोशनी जिनके हिस्से में बस शाम

आज भी... दिवाली पर भी...
लाखों सैनिक हैं तैनात... सीमा पर

डॉक्टर्स, कम्पाउंडर हैं
सेवारत... अस्पताल में

पुलिस के जवान हैं
चौकन्ने... थाने में

रेलकर्मी पहुँचा रहे हैं
हमें... अपने घर

आज भी दिवाली पर भी...
घर-परिवार से दूर...
मुस्तैद हैं ऐसे, अनेकों भारतीय
अपनी-अपनी ड्यूटी पर...
ताकि हम मना सकें, अपनी दिवाली

नमन उन्हें, अभिनंदन उनका...
त्यौहारों पर वंदन उनका...

सिर्फ़ वो

उसे सावन पसंद है
मुझे बारिश में वो
उसे चुप्पी पसंद है
मुझे बोलती हुई वो
उसे मुस्कुराना पसंद है
मुझे खिलखिलाती वो
उसे सुनना पसंद है
मुझे गाती हुई वो
उसे रंग पसंद है
मुझे होली में वो
उसे ज़ेवर पसंद है
मुझे सँवरती हुई वो
उसे नींद पसंद है
मुझे ख़्वाब में वो
उसे बहुत कुछ पसंद है
और मुझे सिर्फ़ वो

जब बड़े हो जाते हैं बेटे...

दुनिया से लड़ते और झगड़ते
कभी लड़खड़ाते, कभी संभलते
टूट रही हिम्मत में
ताज़ातरीन बहार आ जाती है
जब बड़े हो जाते हैं बेटे...

तेज़ी से सिर पर कम हो रहे बाल
और दबे पाँव धीमी धीमी चाल
क़दम जमाती झुर्रियों में
फिर से जवानी, निखार आ जाती है
जब बड़े हो जाते हैं बेटे...

दम तोड़ते हौसले, हाँफ़ रही ताक़त
घबराती तबीयत और रोज़ नई आफ़त
कहीं से हौसलों की मीठी मनुहार आ जाती है
जब बड़े हो जाते हैं बेटे...

तेज़ रफ़्तार में पीछे छूट गए अपने
आधी अधूरी ख़्वाहिशें, ढेर सारे सपने
नई उड़ान लिए परवाज़ों की
जय-जयकार आ जाती है
जब बड़े हो जाते हैं बेटे...

जेठ की तपती दोपहर में अलसाए
जब सूखने लगे मन और तन मुरझाए
कहीं सावन की शीतल फुहार आ जाती है
जब बड़े हो जाते हैं बेटे...

हमसे ज़्यादा जानते हैं वे
अब अच्छा-बुरा पहचानते हैं वे
अब उन पर भरोसा करने की
गुहार आ जाती है
जब बड़े हो जाते हैं बेटे..

बदलते मालिक...

ख़ुशी से इठलाती लड़की
जब बनती है दुल्हन
नहीं पता होता है उसे
हरी-हरी ख़नख़नाती
यह चूड़ियाँ
चूड़ियाँ नहीं हथकड़ी है
और झन-झन करती पायल
पाँवों की बेड़ियाँ

ये सिंदूर, बिंदी, मंगलसूत्र
गिरवी रखने वाले हैं उसे
एक नए मालिक के पास

जिस घर को सँवारने का
सपना लेकर जा रही है वह
वहाँ उसके पास होगी
ढेर सारी जवाबदारी
पर नहीं होगा नेम प्लेट पर
उसका नाम

उसकी ज़िंदगी में
शादी हो जाने से
कुछ बेहतर नहीं हो जाने वाला है
पहले वह
किसी से मिलने जाती थी
पिता से पूछकर
अब उसे पिता से भी मिलने जाना होगा
पति से पूछकर

बाक़ी है...

आहिस्ता चल ऐ ज़िंदगी,
कुछ क़र्ज़ चुकाना बाक़ी है
कुछ दर्द मिटाना बाक़ी है,
कुछ फ़र्ज़ निभाना बाक़ी है

बातें बाक़ी हैं यारों से,
कुछ हँसी-ठहाके बाक़ी हैं
बाक़ी है बच्चों से मस्ती,
माँ-बाप की सेवा बाक़ी है

अभी नाम कमाना बाक़ी है,
अभी नोट लुटाना बाक़ी है
आँसू पोंछूँ लाचारों के,
कुछ दान-पुण्य अभी बाक़ी है

अभी सात समंदर बाक़ी है,
कुछ देश घूमना बाक़ी है
जो मेरे बाद भी जीवित रहे,
अभी ऐसा लिखना बाक़ी है

वो खटती रही रात और दिन,
बिना एक भी आस लिए
हे जीवन संगीनी तेरे संग,
अभी समय बिताना बाक़ी है

कुछ शो'रो-शायरी बाक़ी है,
कुछ फ़िल्में-नाटक बाक़ी है
भाग-भाग कर हाँफ़ रहा,
ख़ुद के लिए जीना बाक़ी है

आहिस्ता चल ऐ ज़िंदगी,
कुछ क़र्ज़ मिटाना बाक़ी है
कुछ दर्द मिटाना बाक़ी है,
कुछ फ़र्ज़ निभाना बाक़ी है ■

आलोक सेठी-कुछ और क़रीब से

कलाकारों और क़लमकारों की सरज़मीं खण्डवा के बाशिंदे हैं आलोक सेठी। मारवाड़ी जैन परिवार के सरल-सहज दम्पत्ति कलमचंद-कांता सेठी के घर 24 सितंबर 1965 को जन्में आलोक कॉमर्स पोस्ट ग्रेज्युएट हैं। सीमित साधनों लेकिन असीमित उत्साह के साथ मध्यप्रदेश के शहर खण्डवा से प्रारंभ किए गए इनके टायर व्यवसाय की प्रतिष्ठा पूरे देश में है जिसकी प्रदेश भर में अनेक शाखाएँ और सब-डीलर्स हैं। आई.एस.ओ. 9001 द्वारा प्रमाणित भारत के पहले टायर प्रतिष्ठान को यदि टायर मॉल भी कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। विस्तार आलोक सेठी की कारोबारी ज़िंदगी का हिस्सा है जिसके अंतर्गत वे होण्डा जैसे अंतरराष्ट्रीय ब्राण्ड की खण्डवा में नुमाइंदगी तथा उत्तराखण्ड में ग्रीन एनर्जी प्लांट की स्थापना भी कर लेते हैं। दो प्रदेशों में कॉलोनाइज़र के रूप में आलोक सेठी की इन्फ्रास्ट्रक्चर कंपनी ने हज़ारों ग्राहकों का विश्वास जीता है। हैरत तब होती है जब वे दुनिया के पचास से अधिक देशों की यात्रा भी कर लेते हैं और परिवार, मित्र और कारोबारी बिरादरी के रिश्तों को मज़बूत करने का अच्छा ख़ासा वक़्त भी निकाल लेते हैं।

'सण्डे का फ़ण्डा' नाम की एसएमएस सीरीज़ प्रत्येक रविवार को हज़ारों सेलफ़ोन्स के इनबॉक्स में पहुँचती है और मानवीय मूल्यों और प्रबंधन के अनमोल संदेशों से रूबरू कराती है। फ़ेसबुक और वाट्स एप्प पर आलोक की भावुक कविताएँ ख़ासी लोकप्रिय हैं। उनके हाथ में जब माइक्रोफ़ोन होता है तो श्रोता उन्हें अपनी तालियों और दाद से मालामाल कर देते हैं। सात किताबें लिख चुके आलोक सेठी इस बात को ग़लत साबित करते हैं कि कारोबारी लोगों के लिए साहित्य सृजन नामुमकिन है। लिखना उनके लिए प्रोफ़ेशन नहीं पैशन है और हर बार काग़ज़ पर अपने क़लम से कुछ नया लिखकर वे अपने पाठकों के दिल में उतर जाने का हुनर रखते हैं। आलोक सेठी यानी कारोबार और क़लमकारी की एक भावपूर्ण जुगलबंदी।

आलोक पर प्रकाश...

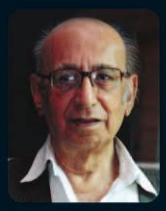

जब मोहब्बत की इमारत ताजमहल में चाँद चमचमाता है, जब जगजीत सिंह की आवाज़ में सुर लहराता है, जब सुबह उठकर कोई कबूतर को दाने चुगाता है या जब आलोक सेठी जैसा कोई नौजवान नयी-नयी पुस्तकें लेकर सामने आता है तो मेरा विश्वास इंसानियत पर और मज़बूत हो जाता है....।

निदा फ़ाज़ली
(सुप्रसिद्ध शायर)

आज जब रिश्तों में ज़हर घुल रहा हो और दिखावे का बोलबाला हो तब आलोक के शब्द आपसी संबंधों के रेगिस्तान में प्यार की बौछार करते नज़र आते हैं।

सुरेन्द्र शर्मा
(सुविख्यात हास्य कवि)

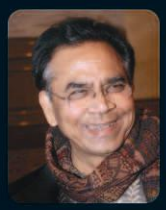

आलोक सेठी हमारे मन की गीली मिट्टी में तुलसी रोपना चाहते हैं; छोटे-छोटें छींटों के साथ। वे अपने सीखे हुए के आधार पर सबको सतर्क, सचेत और सजग करना चाहते हैं। उनकी बातों को सविनय स्वीकार करने का मन करता है। मेरा विश्वास है कि उनकी शब्द सौग़ात से संसार में सुख संचार होगा। आप मेरी बात पर भरोसा कर सकते हैं।

अशोक चक्रधर
(सुविख्यात कवि एवं लेखक)

मैं आलोक भाई से अभिभूत हूँ और हमेशा उनके संपर्क में रहना चाहता हूँ। जिन पर लक्ष्मी कृपा हो किंतु वे सरस्वती का संधान करते हों ऐसे लोगों से मिलना स्वर्ग का आनंद देता है।

डॉ. कुमार विश्वास
(प्रसिद्ध कवि)

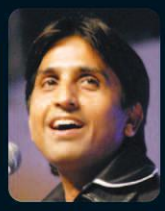

उम्र कभी क़ामयाबी का मानदण्ड तय नहीं करती। आपने इन पचास सालों में कारोबारी दुनिया में रहते हुए सृजन और नवाचार की जो मिसाल कायम की है वह निश्चित ही आज की पीढ़ी के लिए सबक़ और रोशनी का काम करेगी।

एन रघुरमन
(दैनिक भास्कर के लोकप्रिय स्तंभ मैनेजमेंट फंडा के लेखक)

आलोक क़ामयाबी कारोबारी होने के साथ अदब से मुहब्बत करते हैं, ऐसी कम मिसालें हैं। वे उम्र में मुझसे छोटे हैं लेकिन अपने फ़न में, अपने मिजाज़ में, अपनी अदा में, अपने शऊर में, अपने अख़लाक में, अपनी दोस्ती में मुझसे बड़े हैं। मेरी दुआ है कि वे इसी तरह बड़े बने रहें और ख़ूब लंबी उम्र पाएँ।

डॉ. राहत इन्दौरी
(विख्यात शायर)

मित्र एक पेड़ होता है/जिसके होते तुम भीग तो सकते हो सावन में/लेकिन झुलस नहीं सकते जेठ की लू से/यह शाश्वत सत्य है कि मित्र आलोक होता है।

मदनमोहन सिंह समर
(सुविख्यात कवि)

रंग प्रकाशन
33, बक्षी गली, राजबाड़ा, इन्दौर-452 004
e-mail: info@jainsonbookworld.com
Visit our web book store at
www.jainsonbookworld.com

ISBN No. : 978-81-88423-62-0
₹ 200/-